[2014] 3 उम. नि. प. 374

राजस्थान राज्य

बनाम

मनोज कुमार

11 अप्रैल, 2014

न्यायमूर्ति के. एस. राधाकृष्णन् और न्यायमूर्ति दीपक मिश्रा

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302, 304 और 97 – हत्या – शिकायतकर्ता पक्ष द्वारा अभियुक्त के भूखंड पर कब्जे किए जाने की आशंका – प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग करते हुए अभियुक्त द्वारा गोली चलाना – अधिकार का अतिक्रमण – चूंकि अपीलार्थी ने मृतक की मृत्यु कारित करने के आशय से नहीं अपितु भूखंड की रक्षा के लिए गोली चलाई थी और उसमें प्रतिशोध की कोई भावना नहीं थी, किन्तु आवश्यकता से अधिक क्षति कारित करने के कारण वह धारा 304 भाग-I के अधीन अपराध का दोषी होगा ।

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302, 304 और 34 – हत्या – सामान्य आशय – धारा 34 केवल वहां लागू होगी जहां सामान्य आशय को अग्रसर करने में अनेक व्यक्तियों द्वारा आपराधिक कार्य किया गया हो, सह-अभियुक्त केवल मुख्य अभियुक्त के साथ कब्जे के अधिकार की प्रतिरक्षा के लिए गए थे, अतः उनकी दोषसिद्धि धारा 34 के अधीन नहीं की जा सकती ।

इस मामले में, तीन अभियुक्त हैं अर्थात् राजू **उर्फ** राज कुमार, हेमंत और मनोज कुमार । विचारण न्यायालय ने अभियुक्त राज कुमार को दंड संहिता की धारा 302/34 और आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 25/27 के अधीन और अभियुक्त हेमंत और मनोज को केवल दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दोषसिद्ध किया है । अभियुक्तों द्वारा अपील फाइल किए जाने पर उच्च न्यायालय ने अभियुक्त राज कुमार की दोषसिद्धि को धारा 302/34 से धारा 304 भाग-I में परिवर्तित कर दिया और अभियुक्त हेमंत और मनोज को सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया । राज्य ने उच्चतम न्यायालय के समक्ष एक अपील अभियुक्त मनोज की दोषमुक्ति के विरुद्ध और दूसरी अपील राज कुमार और हेमंत के विरुद्ध फाइल की है । उच्चतम न्यायालय ने उच्च न्यायालय के आदेश की पुष्टि करते हुए राज्य द्वारा

फाइल की गई दोनों अपीलें खारिज कर दीं । अपीलें खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – वर्तमान मामले में, प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का अभिवाक् अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्री के आधार पर उद्भूत हुआ है । जहां तक सबूत के भार का संबंध है, हमारा यह निष्कर्ष है कि अधिसंभाव्यता की प्रबलता के सिद्धांत को कायम रखने के लिए प्रत्यक्ष और दस्तावेजी साक्ष्य है । यह नहीं कहा जा सकता है कि अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री नहीं है जिसके आधार पर यह अभिवाक् त्यक्त किया जा सके । इस प्रकार, उपर्युक्त दलील अस्वीकार्य होने के कारण एतद्द्वारा खारिज की जाती है । राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि जब अभियुक्तों ने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का अतिक्रमण किया था और मृतक की मृत्यु कारित की थी तब ऐसी स्थिति में उन सभी को दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दोषसिद्ध किया जाना चाहिए था । इस संबंध में, इसके पूर्व कि वर्तमान मामले के तथ्यों पर विचार करें, हम कतिपय निर्णयज विधि निर्दिष्ट कर रहे हैं । न्यायालय ने यह भी मत व्यक्त किया है कि ऐसे अधिकार का प्रयोग करने से दुष्चरित्र व्यक्ति अपराध करने से न केवल रुक सकते हैं बल्कि इससे स्वतंत्र नागरिक में अपने अधिकार का सही प्रयोग करने की भावना भी पैदा होती है क्योंकि संकट से बचकर भाग जाने से अधिक अपमानजनक कोई कार्य नहीं है । यदि आवेग की तीव्रता में वह सुनिश्चित और सटीक बल से अधिक बल का प्रयोग कर लेता है तब ऐसी स्थिति में उसे विधि के अधीन छूट मिल सकती है । एक मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का पूर्णतया उचित प्रयोग करने के लिए यह साबित किया जाना चाहिए कि प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार अभियुक्त के पक्ष में था और इस अधिकार का प्रयोग करने से ही मृत्यु कारित हुई है और यदि न्यायालय को उक्त अभिवाक् खारिज करना होता तब दो संभव तरीके होते जिनमें इसे खारिज किया जा सकता था अर्थात् एक ओर यह अभिनिर्धारित किया जाता कि शरीर की प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार बनता है, किन्तु, आवश्यकता से अधिक क्षति कारित की गई या अनुकल्पतः इस अधिकार के प्रयोग से मृत्यु कारित नहीं हुई और ऐसी स्थिति में धारा 300 का अपवाद 2 लागू होगा । अभिलेख पर यह सामग्री है कि अभियुक्त और मृतक के बीच कहा-सुनी हुई थी और यह धमकी भी दी गई थी कि इत्तिलाकर्ता और अन्य व्यक्ति भूखंड का कब्जा ग्रहण करेंगे । उच्च न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला है कि राज कुमार की संपत्ति को खतरा

था और उसने इत्तिलाकर्ता और अन्य व्यक्तियों को दूर भगाने का प्रयास किया था । यद्यपि अभियोजन पक्ष का यह वृत्तांत है कि अभियुक्त भूखंड का कब्जा ग्रहण करने का प्रयास कर रहे थे, फिर भी साक्ष्य की संवीक्षा किए जाने पर यह पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि उन्हें निर्माणस्थल पर निर्माण कार्य करने की बहुत जल्दी थी, तदनुसार वे इसी संबंध में कदम बढ़ा रहे थे । इस संदर्भ में, अभियुक्तों के कृत्य पर विचार किया जाना चाहिए । संबद्ध परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए मामले पर विचार किया जाना चाहिए न कि किसी एक ही बात की सूक्ष्मता से संवीक्षा की जाए यह सत्य है कि उसने गोली चलाई थी किन्तु ऐसा मृतक की मृत्यु कारित करने के आशय से नहीं किया गया था । अभियोजन पक्ष ने अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं की है कि उक्त अभियुक्त में प्रतिशोध की भावना थी या मृतक की हत्या कारित करने के लिए उसका दुर्भावपूर्ण आशय था । यदि ऐसा होता तो यह प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के सिद्धांत के पूर्णतया प्रतिकूल होता । ऐसी स्थिति होने पर उच्च न्यायालय ने इस दलील को ठीक ही स्वीकार किया है कि राज कुमार ने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का अतिक्रमण किया है और उच्च न्यायालय ने उसे दंड संहिता की धारा 304 भाग-I के अधीन ठीक ही दोषी पाया है । यहां हम उन अभियुक्तों की दोषमुक्ति की न्यायोचित्यता के पहलुओं पर विचार करेंगे जो उस अभियुक्त के साथ थे जिसने गोली चलाई थी । राज्य के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि चूंकि वे, अभियुक्त राज कुमार के साथ आए थे इसलिए उनका सामान्य आशय बन गया था । राज्य के विद्वान् काउंसेल श्री मिलिन्द कुमार ने यह दलील दी है कि यदि उनका ऐसा आशय पहले से नहीं था तो यह तत्पश्चात् घटनास्थल पर बन गया था । साक्ष्य का परिशीलन करने पर हमारा यह निष्कर्ष है कि अभियुक्त मनोज कुमार और हेमन्त कुमार अभियुक्त राज कुमार के साथ कब्जे के अधिकार की प्रतिरक्षा के लिए आए थे । यह ऐसा मामला है जिसमें अभियुक्त राज कुमार ने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का अतिक्रमण किया है । (पैरा 12, 13, 14 और 15)

जहां तक न्यायालय का विचार है, वर्तमान मामले के तथ्य उपर्युक्त मामले की तथ्यात्मक स्थिति के समरूप हैं क्योंकि प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का अतिक्रमण केवल राज कुमार द्वारा किया गया है । ऐसे मामले में, ऐसे प्रत्येक अभियुक्त के दोष पर अलग से विचार किया जाना चाहिए जिसने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का अतिक्रमण किया है । यह मामला

पूर्णतः भिन्न होता, यदि प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार कतई नहीं बनता या अभियुक्तों ने स्पष्ट कार्य किया होता । इस प्रकार, हमारी सुविचारित राय में आन्वयिक (परोक्ष) दायित्व, जैसा कि दंड संहिता की धारा 34 के अधीन परिकल्पित है, लागू नहीं होगा । (पैरा 17)

अवलंबित निर्णय

पैरा

[1971] (1971) 3 एस. सी. सी. 449 :
जोगिन्दर अहीर और अन्य बनाम **बिहार राज्य** । 16

निर्दिष्ट निर्णय

[2010] (2010) 7 एस. सी. सी. 477 :
सिकन्दर सिंह और अन्य बनाम **बिहार राज्य** ; 14

[2008] (2008) 16 एस. सी. सी. 657 :
भंवर सिंह और अन्य बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ; 13

[1980] (1980) सप्ली एस. सी. सी. 215 :
मुहम्मद रमजानी बनाम **दिल्ली राज्य** ; 11, 13

[1979] (1979) 2 एस. सी. सी. 648 :
सलीम जिया बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ; 11

[1971] ए. आई. आर. 1971 एस. सी. 1857 :
विद्या सिंह बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ; 14

[1969] (1969) 2 एस. सी. सी. 207 :
बिहार राज्य बनाम **नाथू पांडे और अन्य** ; 15, 16

[1968] [1968] 2 एस. सी. आर. 455 :
मुंशी राम और अन्य बनाम **दिल्ली प्रशासन** । 11, 13

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2007 की दांडिक अपील सं. 885. (इसके साथ 2007 की दांडिक अपील सं. 1073 की भी सुनवाई की गई)

2000 की दांडिक अपील सं. 396 और 2003 की दांडिक अपील सं. 1011 में राजस्थान उच्च न्यायालय की जयपुर खंड न्यायपीठ के तारीख

14 फरवरी, 2006 के एक ही निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री मिलिंद कुमार

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री सुशील कुमार जैन, पुनीत जैन, क्रिस्टि जैन, अनुराग गोहिल, (सुश्री) रुचिका गोहिल और प्रतिभा जैन

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति दीपक मिश्रा ने दिया ।

न्या. मिश्रा – वर्तमान अपील विशेष इजाजत द्वारा, 2000 की दांडिक अपील सं. 396 और 2003 की दांडिक अपील सं. 1011 में राजस्थान उच्च न्यायालय की जयपुर खंड न्यायपीठ के तारीख 14 फरवरी, 2006 के एक ही निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है जिसमें उच्च न्यायालय ने राजू **उर्फ** राज कुमार की अपील को भागतः मंजूर किया है जिसके अनुसार दंड संहिता की धारा 302 के अधीन की गई उसकी दोषसिद्धि को दंड संहिता की धारा 304 भाग-I में परिवर्तित किया है और इसके अतिरिक्त आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 25 और 27 के अधीन दोषसिद्धि की पुष्टि की है और उसे 500/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने के साथ 10 वर्ष का कठोर कारावास भोगने और जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम किए जाने पर अतिरिक्त छह मास का कठोर कारावास भोगने का दंडादेश दिया है । सह-अभियुक्त हेमंत कुमार को सभी आरोपों से दोषमुक्त किया गया है जिसने राजू और मनोज कुमार के साथ स्वतंत्र रूप से अपील फाइल की थी ।

2. आरंभ में हम यह मत व्यक्त करते हैं कि राजू **उर्फ** राज कुमार की मृत्यु तारीख 8 मार्च, 2012 को हो गई थी और इस संबंध में अभिलेख पर मृत्यु प्रमाणपत्र प्रस्तुत किया गया है । इस बात को दृष्टिगत करते हुए, राजू **उर्फ** राज कुमार के संबंध में 2007 की दांडिक अपील सं. 1073 उपशमित की जाती है और इस अपील में केवल अभियुक्त हेमंत कुमार के संबंध में ही कार्यवाही की जाएगी ।

3. संक्षेप में अभियोजन पक्षकथन इस प्रकार है कि तारीख 26 मई, 1998 को पुलिस ने मृतक अनिरुद्ध मिश्रा का कथन श्री कल्याण अस्पताल, सीकर में अभिलिखित किया था जिसमें मृतक ने यह बताया था कि उस दिन लगभग 8.30 बजे अपराह्न में वह अपने भाई बसंत मिश्रा (अभि. सा. 4) और महेश कुमार सैनी (अभि. सा. 3) के साथ अपने और

अपने भाई के रिक्त पड़े हुए भूखंड पर, जो लिसाडिया-का-बास नामक स्थान पर स्थित है, इसलिए गया था कि उन्हें इस बात की आशंका थी कि रामनिवास और शांति प्रसाद के पुत्र उस भूखंड पर कब्जा कर सकते हैं । उस समय रामनिवास और शांति प्रसाद के पुत्र फूलजी लिसाडिया के घर पर मौजूद थे जो उस भूखंड के बराबर में था । मृतक अनिरुद्ध मिश्रा के अनुसार उन्होंने पहले तो उसे गालियां दीं और इसके पश्चात् गोली चलाई जिसके परिणामस्वरूप उसे उसकी छाती के दाईं ओर क्षति पहुंची और उसका भाई रमेश **उर्फ** उमेश (अभि. सा. 5), आहत को अस्पताल ले गया । उसके कथन के आधार पर, संबद्ध पुलिस अधिकारी ने दंड संहिता की धारा 307 और 149 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए 1998 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 243 रजिस्ट्रीकृत की । तथापि, अनिरुद्ध की मृत्यु के पश्चात् इस अपराध को दंड संहिता की धारा 302 के अधीन परिवर्तित कर दिया गया और अन्वेषण आरंभ किया गया । अन्वेषण के दौरान, राजू और हेमंत को गिरफ्तार किया गया और मनोज को फरार घोषित किया गया । राजू और हेमंत के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 302, 302/34 तथा आयुध अधिनियम की धारा 3/25, 3/27 और 3/33 के अधीन अपराधों के लिए आरोपपत्र फाइल किया गया और यह 1998 के सेशन मामला सं. 34 की विषयवस्तु बन गया । मनोज के गिरफ्तार किए जाने के पश्चात् दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन अपराध के लिए उसके विरुद्ध आरोपपत्र प्रस्तुत किया गया और 2002 के सेशन मामला सं. 8 के रूप में उसका अलग से विचारण किया गया ।

4. अभियुक्तों ने अपने दोषी होने से इनकार किया और यह अभिवाक् किया कि उन्हें संपत्ति विवाद और शत्रुता के कारण मिथ्या फंसाया गया है । अभियोजन पक्ष ने अपना पक्षकथन साबित करने के लिए विचारण के प्रथम चरण में कुल मिलाकर 16 साक्षियों की परीक्षा की है और 37 दस्तावेजों को चिन्हांकित किया है तथा अभिलेख पर 8 वस्तुओं को प्रस्तुत किया है । विचारण के द्वितीय चरण में अभियोजन पक्ष ने कुल मिलाकर 12 साक्षियों की परीक्षा की और इतने ही दस्तावेज प्रदर्शित किए हैं । द्वितीय विचारण में प्रतिरक्षा पक्ष ने एक साक्षी प्रस्तुत किया है और अपने अभिवाक् के समर्थन में चार दस्तावेज प्रस्तुत किए हैं ।

5. दोनों विचारणों में एक ही जैसे साक्षी हैं और इनमें मुख्य साक्षी अंजनी कुमार (अभि. सा. 1), मृतक का भाई अर्थात् प्रत्यक्षदर्शी साक्षी महेश कुमार सैनी (अभि. सा. 2), मृतक का भाई बसंत कुमार (अभि. सा. 4),

मृतक का एक अन्य भाई रमेश **उर्फ** उमेश (अभि. सा. 5), डा. वी. के. सोनी (अभि. सा. 6) जिन्होंने मृतक की चिकित्सा परीक्षा की थी और एक्स-रे रिपोर्ट तैयार की थी, डा. जी. आर. तंवर (अभि. सा. 10) जिन्होंने शव-परीक्षा की थी और भगवान सिंह (अभि. सा. 12) अर्थात् अन्वेषक अधिकारी हैं जिनका उल्लेख प्रथम विचारण में किया गया है । मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने राज कुमार को दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन तथा आयुध अधिनियम की धारा 25 और 27 के अधीन दोषसिद्ध किया था, इसके अतिरिक्त अभियुक्त हेमंत को दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया था । द्वितीय विचारण में अभियुक्त मनोज को दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था ।

6. अभियुक्तों ने दो अलग-अलग अपीलें फाइल की हैं और उच्च न्यायालय ने अपने एक ही निर्णय और आदेश के अनुसार प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार से संबंधित अभियुक्तों के पक्षकथन को स्वीकार किया है । तथापि, चूंकि अभियुक्त राजू ने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का अतिक्रमण किया है, इसलिए उच्च न्यायालय ने उसकी दोषसिद्धि को दंड संहिता की धारा 304 भाग-I में परिवर्तित करते हुए उसे इसमें इसके पूर्व उल्लिखित रूप में दंडादिष्ट किया है । जहां तक अभियुक्त हेमंत और मनोज का संबंध है, न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि उनकी दोषसिद्धि दंड संहिता की धारा 34 के अधीन कायम नहीं रखी जा सकती है क्योंकि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर दंड संहिता की धारा 34 लागू नहीं होगी ।

7. हमने राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री मिलिंद कुमार और प्रत्यर्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री सुशील कुमार जैन को सुना है ।

8. इन अपीलों में दो प्रश्न विचार के लिए उद्भूत होते हैं – (I) क्या उच्च न्यायालय ने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के अभिवाक् को स्वीकार करने में न्यायोचित किया है ; और (II) क्या उच्च न्यायालय द्वारा निकाला गया यह निष्कर्ष उचित है कि दंड संहिता की धारा 34 इस मामले के तथ्यों को लागू नहीं होगी ।

9. विद्वान् विचारण न्यायाधीश के निर्णय का परिशीलन करने पर, यह

उल्लेखनीय है कि विचारण न्यायाधीश ने विस्तार से यह वर्णन किया है कि प्रश्नगत भूमि को लेकर पक्षकारों के बीच विवाद चल रहा था । न्यायाधीश ने यह निष्कर्ष निकाला है कि अभिलेख पर प्रस्तुत मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य के अनुसार पारसराम लिसाडिया ने रजिस्ट्रीकृत विक्रय-विलेख (प्रदर्श पी-9) के अनुसार रमेश कुमार को भूखंड विक्रय किया था जो मृतक अनिरुद्ध मिश्रा का बड़ा भाई है । अभिलेख पर यह प्रस्तुत किया गया है कि पारसराम लिसाडिया और फूलचंद लिसाडिया के बीच भूखंड को लेकर विवाद चल रहा था और इसी कारण पारसराम ने स्थायी व्यादेश के लिए 1986 का सिविल वाद सं. 131 फाइल किया था जिसमें यह अभिकथन किया गया था कि तारीख 11 जुलाई, 1986 को फूलचंद ने पारसराम को उस भूखंड पर निर्माण कार्य करने से रोका था । तारीख 17 सितम्बर, 1997 को फूलचंद के विरुद्ध स्थायी व्यादेश के लिए फाइल किए गए वाद में एकपक्षीय डिक्री पारित की गई थी जिसके अनुसार फूलचंद को प्रश्नगत भूमि को लेकर पारसराम के कब्जे में हस्तक्षेप करने से रोका गया था । प्रदर्श पी-9 से भी यह भी पता चलता है कि वादी के पक्ष में वाद विनिश्चित किए जाने के समय तक पारसराम ने रजिस्ट्रीकृत विक्रय-विलेख (प्रदर्श पी-9) के अनुसार रमेश मिश्रा को वह भूखंड बेच दिया था और रमेश मिश्रा ने प्रदर्श पी-12 और स्थल नक्शा (प्रदर्श पी-14) के अनुसार निर्माण कार्य की मंजूरी भी प्राप्त कर ली थी । ये घटनाएं शीघ्रता के साथ घटित होती गईं और आवश्यक मंजूरी प्राप्त करने के पश्चात् रमेश ने निर्माण कार्य के लिए सामग्री एकत्र करनी आरंभ कर दी । रमेश (अभि. सा. 5) के साक्ष्य में यह उल्लेख है कि विक्रय-विलेख निष्पादित किए जाने के पश्चात् भी पारसराम और फूलचंद के बीच विवाद बना रहा । अभिलेख पर यह भी प्रस्तुत किया गया है कि निर्माण कार्य की मंजूरी घटना के केवल चार दिन पूर्व प्राप्त की गई थी ; और इत्तिलाकर्ता और अभियुक्तों के बीच भूखंड के संबंध में विवाद हो गया क्योंकि मूल स्वामी फूलचंद ने उक्त भूखंड को अभियुक्तों के पिता शांति प्रसाद के पास बंधक कर दिया था और उन्हीं के पास उसका कब्जा था । जैसा कि हमें अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य से दिखाई पड़ता है, इस संबंध में तनिक भी संदेह नहीं है कि राज कुमार ने गोली चलाई थी जिसके परिणामस्वरूप अनिरुद्ध की मृत्यु हुई । यह भी स्पष्ट है कि भूखंड को लेकर विवाद चल रहा था और उसका कब्जा अभी तक अभियुक्तों के पास है । साक्ष्य से यह भी सामने आया है कि अभियुक्त वाद में पक्षकार नहीं थे । ऐसी स्थिति में, रमेश निर्माणस्थल पर सामग्री इकट्ठा करके निर्माण कार्य करने का प्रयास कर रहा था, वास्तव में उसने कब्जा लेने के लिए अपने भाई अनिरुद्ध और अन्य भाइयों को वहां भेजा था ।

मृतक और अन्य व्यक्तियों के घटनास्थल पर पहुंचने के पश्चात् अभियुक्त सूचना प्राप्त करने पर लिसाडिया के मकान पर पहुंचे और आरंभ में तो उनके बीच कहा-सुनी हुई और किन्तु उसके पश्चात् गोली चलाई गई ।

10. उच्च न्यायालय ने बहुत से पहलुओं पर विचार किया है जो इस प्रकार हैं कि विवादित भूखंड के संबंध में स्वामित्व और कब्जे को लेकर विवाद चल रहा था ; इत्तिलाकर्ता और अन्य व्यक्तियों ने घटना के कुछ दिन पूर्व प्लिन्थ लेवल तक निर्माण कार्य करने के लिए सामग्री इकट्ठी की ; नगर निगम ने घटना के केवल चार दिन पूर्व मंजूरी प्रदान की है ; रमेश (अभि. सा. 5) और अन्य व्यक्तियों को यह आशंका थी कि भूखंड का कब्जा उनके हाथ से चला जाएगा ; कब्जे के संबंध में अभियुक्तों द्वारा सकारात्मक अभिवाक् किया गया है ; और अभियुक्त राज कुमार ने संपत्ति के कब्जे की प्रतिरक्षा करने के आशय से और मृतक और अन्य व्यक्तियों को दूर भगाने के लिए गोली चलाई थी, किन्तु दुर्भाग्यवश गोली मृतक को लगी । साक्ष्य का उपर्युक्त विश्लेषण करने पर, उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि अभियुक्त राज कुमार ने अपनी प्रतिरक्षा के अधिकार का अतिक्रमण किया है ।

11. राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री मिलिंद कुमार ने यह दलील दी है कि अभियुक्तों ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 313 के अधीन दिए गए अपने कथनों में प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का अभिवाक् नहीं किया है और इसीलिए उच्च न्यायालय उस पर विचार नहीं कर सकता था । यह भी मत व्यक्त किया गया है यदि यह उपधारित कर लिया जाए कि पक्षकथन पर विचार किया जा सकता है, वर्तमान मामले में अभियुक्त प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार को सिद्ध करने के भार का निर्वहन करने में असफल रहे हैं । इस संदर्भ में, हम **मुंशी राम और अन्य** बनाम **दिल्ली प्रशासन**[1] वाले मामले में किए गए विनिश्चय को निर्दिष्ट करते हैं जिसमें यह अधिकथित किया गया है कि यदि अभियुक्त प्राइवेट प्रतिरक्षा का अभिवाक् न करें और अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य से ऐसा प्रतीत होता हो तब भी न्यायालय ऐसे अभिवाक् पर विचार करने के लिए स्वतंत्र है और ऐसे अभिवाक् को साबित करने का भार अभियुक्त पर पड़ेगा और उक्त अभिवाक् के पक्ष में अधिसंभाव्यताओं की प्रबलता दर्शित करके साबित करने के भार का निर्वहन किया जा सकता है । **सलीम जिया** बनाम **उत्तर**

---

[1] [1968] 2 एस. सी. आर. 455.

प्रदेश राज्य[1] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा यह मत व्यक्त किया गया है कि यह सत्य है कि प्राइवेट प्रतिरक्षा के अभिवाक् को सिद्ध करने का भार ऐसा नहीं है जैसाकि युक्तियुक्त संदेह के परे अपना पक्षकथन साबित करने के लिए अभियोजन पक्ष पर पड़ता है, अभियुक्त के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह अपने अभिवाक् पूर्ण रूप से साबित करे और वह अधिसंभाव्यताओं की प्रबलता को सिद्ध करते हुए अभियोजन साक्षियों की प्रतिपरीक्षा में प्राइवेट प्रतिरक्षा का अभिवाक् कर सकता है और या प्रतिरक्षा साक्षी प्रस्तुत करके ऐसा कर सकता है और अपनी जिम्मेदारी से निवृत्त हो सकता है । इसी प्रकार **मुहम्मद रमजानी** बनाम **दिल्ली राज्य**[2] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यह अतिसामान्य बात है कि सबूत का भार जो भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 105 के अधीन प्राइवेट प्रतिरक्षा के अभिवाक् को सिद्ध करने के लिए अभियुक्त पर पड़ता है, इतना कठिन नहीं है जितना अभियोजन पक्ष पर उस अपराध के संघटकों को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने के लिए पड़ता है जिसके संबंध में अभियुक्त पर आरोप लगाया गया है ।

12. वर्तमान मामले में, प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का अभिवाक् अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्री के आधार पर उद्भूत हुआ है । जहां तक सबूत के भार का संबंध है, हमारा यह निष्कर्ष है कि अधिसंभाव्यता की प्रबलता के सिद्धांत को कायम रखने के लिए प्रत्यक्ष और दस्तावेजी साक्ष्य है । यह नहीं कहा जा सकता है कि अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री नहीं है जिसके आधार पर यह अभिवाक् त्यक्त किया जा सके । इस प्रकार, उपर्युक्त दलील अस्वीकार्य होने के कारण एतद्द्वारा खारिज की जाती है ।

13. राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि जब अभियुक्तों ने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का अतिक्रमण किया था और मृतक की मृत्यु कारित की थी तब ऐसी स्थिति में उन सभी को दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दोषसिद्ध किया जाना चाहिए था । इस संबंध में, इसके पूर्व कि वर्तमान मामले के तथ्यों पर विचार करें, हम कतिपय निर्णयज विधि निर्दिष्ट कर रहे हैं । **मुंशी राम** (उपरोक्त) वाले मामले में प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार पर विचार करते हुए, इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि विधि के अधीन यह अपेक्षा नहीं की गई है कि कोई व्यक्ति जिसकी संपत्ति पर अतिचारियों द्वारा बलपूर्वक कब्जा करने

---

[1] (1979) 2 एस. सी. सी. 648

[2] (1980) सप्ली एस. सी. सी. 215.

का प्रयास किया गया है वह वहां से भाग जाए और प्राधिकारियों की संरक्षा में आ जाए क्योंकि प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार से सामाजिक उद्देश्य पूरा होता है और इस अधिकार का अर्थ उदार रूप से लगाना चाहिए । न्यायालय ने यह भी मत व्यक्त किया है कि ऐसे अधिकार का प्रयोग करने से दुष्चरित्र व्यक्ति अपराध करने से न केवल रुक सकते हैं बल्कि इससे स्वतंत्र नागरिक में अपने अधिकार का सही प्रयोग करने की भावना भी पैदा होती है क्योंकि संकट से बचकर भाग जाने से अधिक अपमानजनक कोई कार्य नहीं है । **मुहम्मद रमजानी** (उपरोक्त) वाले मामले में न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि यह भी सुस्थापित है कि जिस व्यक्ति को अपनी या अन्य किसी व्यक्ति की जान का खतरा होता है, उससे यह प्रत्याशा नहीं की जा सकती कि वह खतरे को दूर करने के लिए बहुत बारीकी से सोच-विचार करके कम से कम बल का प्रयोग करे । यदि आवेग की तीव्रता में वह सुनिश्चित और सटीक बल से अधिक बल का प्रयोग कर लेता है तब ऐसी स्थिति में उसे विधि के अधीन छूट मिल सकती है । **भंवर सिंह और अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का पूर्णतया उचित प्रयोग करने के लिए यह साबित किया जाना चाहिए कि प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार अभियुक्त के पक्ष में था और इस अधिकार का प्रयोग करने से ही मृत्यु कारित हुई है और यदि न्यायालय को उक्त अभिवाक् खारिज करना होता तब दो संभव तरीके होते जिनमें इसे खारिज किया जा सकता था अर्थात् एक ओर यह अभिनिर्धारित किया जाता कि शरीर की प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार बनता है, किन्तु, आवश्यकता से अधिक क्षति कारित की गई या अनुकल्पतः इस अधिकार के प्रयोग से मृत्यु कारित नहीं हुई और ऐसी स्थिति में धारा 300 का अपवाद 2 लागू होगा ।

14. उपर्युक्त सिद्धांतों की कसौटी के आधार पर प्रस्तुत साक्ष्य और उच्च न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्ष की परख की जानी चाहिए । अभिलेख पर यह सामग्री है कि अभियुक्त और मृतक के बीच कहा-सुनी हुई थी और यह धमकी भी दी गई थी कि इत्तिलाकर्ता और अन्य व्यक्ति भूखंड का कब्जा ग्रहण करेंगे । उच्च न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला है कि राज कुमार की संपत्ति को खतरा था और उसने इत्तिलाकर्ता और अन्य व्यक्तियों को दूर भगाने का प्रयास किया था । यद्यपि अभियोजन पक्ष का यह वृत्तांत है कि अभियुक्त भूखंड का कब्जा ग्रहण करने का प्रयास कर

---

[1] (2008) 16 एस. सी. सी. 657.

रहे थे, फिर भी साक्ष्य की संवीक्षा किए जाने पर यह पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि उन्हें निर्माणस्थल पर निर्माण कार्य करने की बहुत जल्दी थी, तदनुसार वे इसी संबंध में कदम बढ़ा रहे थे । इस संदर्भ में, अभियुक्तों के कृत्य पर विचार किया जाना चाहिए । संबद्ध परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए मामले पर विचार किया जाना चाहिए न कि किसी एक ही बात की सूक्ष्मता से संवीक्षा की जाए जैसाकि **विद्या सिंह** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1] और **सिकन्दर सिंह और अन्य** बनाम **बिहार राज्य**[2] वाले मामलों में अभिनिर्धारित किया गया है । यह सत्य है कि उसने गोली चलाई थी किन्तु ऐसा मृतक की मृत्यु कारित करने के आशय से नहीं किया गया था । अभियोजन पक्ष ने अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं की है कि उक्त अभियुक्त में प्रतिशोध की भावना थी या मृतक की हत्या कारित करने के लिए उसका दुर्भावपूर्ण आशय था । यदि ऐसा होता तो यह प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के सिद्धांत के पूर्णतया प्रतिकूल होता । ऐसी स्थिति होने पर उच्च न्यायालय ने इस दलील को ठीक ही स्वीकार किया है कि राज कुमार ने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का अतिक्रमण किया है और उच्च न्यायालय ने उसे दंड संहिता की धारा 304 भाग-I के अधीन ठीक ही दोषी पाया है ।

15. यहां हम उन अभियुक्तों की दोषमुक्ति की न्यायोचितता के पहलुओं पर विचार करेंगे जो उस अभियुक्त के साथ थे जिसने गोली चलाई थी । राज्य के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि चूंकि वे, अभियुक्त राज कुमार के साथ आए थे इसलिए उनका सामान्य आशय बन गया था । राज्य के विद्वान् काउंसेल श्री मिलिन्द कुमार ने यह दलील दी है कि यदि उनका ऐसा आशय पहले से नहीं था तो यह तत्पश्चात् घटनास्थल पर बन गया था । साक्ष्य का परिशीलन करने पर हमारा यह निष्कर्ष है कि अभियुक्त मनोज कुमार और हेमन्त कुमार अभियुक्त राज कुमार के साथ कब्जे के अधिकार की प्रतिरक्षा के लिए आए थे । यह ऐसा मामला है जिसमें अभियुक्त राज कुमार ने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का अतिक्रमण किया है । **बिहार राज्य** बनाम **नाथू पांडे और अन्य**[3] वाले मामले में तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने, उच्च न्यायालय के इन निष्कर्षों को स्वीकार

---

[1] ए. आई. आर. 1971 एस. सी. 1857.

[2] (2010) 7 एस. सी. सी. 477.

[3] (1969) 2 एस. सी. सी. 207.

करते हुए कि कुछ अभियुक्तों ने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का अतिक्रमण किया है, यह राय व्यक्त की है कि यह कहना संभव नहीं होगा कि सभी अभियुक्तों का हत्या करने का सामान्य आशय था और जिन अभियुक्तों ने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का अतिक्रमण किया है वे उनकी हत्या के लिए जिम्मेदार होंगे ।

16. **जोगिन्दर अहीर और अन्य** बनाम **बिहार राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने **नाथू पांडे और अन्य** (उपरोक्त) वाले मामले में किए गए विनिश्चय को निर्दिष्ट किया है और दंड संहिता की धारा 34 के लागू होने के संबंध में लगभग ऐसे ही निष्कर्षों पर विचार किया है और यह राय व्यक्त की है कि अपराध कारित करने के लिए सभी अभियुक्तों का सामान्य आशय नहीं था । उक्त मामले में उच्च न्यायालय ने दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 304 भाग-II के अधीन उस मामले में के अभियुक्त-अपीलार्थियों को दोषसिद्ध ठहराया । उस मामले में कार्यवाही करते हुए निम्न अभिनिर्धारित किया गया है :–

> "हम उच्च न्यायालय के इस मत से सहमत नहीं हैं कि मामले के तथ्य और परिस्थितियों के आधार पर अपीलार्थियों का ऐसा आशय हो सकता था । निश्चय ही उनका संपत्ति के अधिकार में अतिक्रमण से प्रतिरक्षा करने का सामान्य आशय था । ऐसा करने में यदि उनमें से एक या दो अभियुक्तों ने आवश्यकता से अधिक शारीरिक क्षति कारित की थी तब अन्य अभियुक्तों का ऐसा सामान्य आशय नहीं माना जा सकता है जिसके परिणामस्वरूप मृतक की मृत्यु हुई । धारा 34 केवल वहां लागू होती है जहां सामान्य आशय को अग्रसर करने में अनेक व्यक्तियों द्वारा आपराधिक कार्य किया गया हो । यह साबित या सिद्ध नहीं किया गया है कि अपीलार्थियों ने कोई भी स्पष्ट कृत्य किया है जिससे यह दर्शित होता हो कि उनका भी उस व्यक्ति या उन व्यक्तियों जैसा आशय था जिन्होंने मृतक के सिर पर ऐसी क्षति या क्षतियां पहुंचाईं जिनके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हुई । अतः, उसे संभवतः दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 304 भाग-II के अधीन दोषी नहीं ठहराया जा सकता है ।"

---

[1] (1971) 3 एस. सी. सी. 449.

17. जहां तक हमारा विचार है, वर्तमान मामले के तथ्य उपर्युक्त मामले की तथ्यात्मक स्थिति के समरूप हैं क्योंकि प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का अतिक्रमण केवल राजकुमार द्वारा किया गया है । ऐसे मामले में, ऐसे प्रत्येक अभियुक्त के दोष पर अलग से विचार किया जाना चाहिए जिसने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का अतिक्रमण किया है । यह मामला पूर्णतः भिन्न होता, यदि प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार कतई नहीं बनता या अभियुक्तों ने स्पष्ट कार्य किया होता । इस प्रकार, हमारी सुविचारित राय में आन्वयिक (परोक्ष) दायित्व, जैसा कि दंड संहिता की धारा 34 के अधीन परिकल्पित है, लागू नहीं होगा ।

18. हमारे उपर्युक्त विश्लेषण को ध्यान में रखते हुए, हमें इन अपीलों में कोई भी गुणता दिखाई नहीं देती है, तदनुसार ये खारिज की जाती हैं ।

अपीलें खारिज की गईं ।

अस./अनू.

[2014] 3 उम. नि. प. 387

कर्नाटक राज्य और एक अन्य

बनाम

एसोसिएटेड मेनेजमेंट आफ (गवर्नमेंट रिकग्नाइज़ड - अनएडेड - इंग्लिश मीडियम) प्राइमरी एंड सेकेंडरी स्कूल्स और अन्य

तथा

नल्लूर प्रसाद और अन्य

बनाम

कर्नाटक राज्य और अन्य

तथा

आर. जी. नदादूर और अन्य

बनाम

शुभोदय विद्या समस्थे और एक अन्य